सातवाँ अध्याय

'रामचरितमानस' एवं 'सप्तकाण्ड रामायण' में निहित रामभक्ति की तुलना

7.1 प्रस्तावना

'रामचरितमानस' जहाँ राम-भक्त शिरोमणि तुलसीदास के हृदय में निहित राम-भक्ति की अति सुंदर भावमयी अभिव्यंजना है, जिसे कवि शिरोमणि ने अपने समर्पण भाव से संजोया है। वहीं दूसरी ओर 'सप्तकाण्ड रामायण' माधव कंदली द्वारा लिखी गयी एक ऐसी उपलब्धि है जो पूरे असम प्रांत का गौरव बन गयी है। कालांतर में 'सप्तकाण्ड रामायण' के कुछ अध्याय आदिकांड और उत्तरकांड गुम हो गए और जिसे असम के दो महान गुरु-शिष्य, महापुरुष शंकरदेव तथा श्री मधावदेव ने अप्रमादी कवि को समर्पित कर सम्पूर्ण किया। अब हमारे पास शंकर-माधव के सहयोग के कारण ही सम्पूर्ण सात-कांड रामायण असमीया भाषा में उपलब्ध है। दोनों ही काव्य 'रामचरितमानस' और 'सप्तकाण्ड रामायण' भक्ति भाव में रचित दो महानतम महाकाव्य है। इसमें जहां एक ओर रामभक्ति की महान अभिव्यंजना है जिसमें मानव कल्याण की अहैतुकी भावना निहित है वहीं दूसरी ओर इन दोनों ही महाकाव्यों में मानव जाति, उसकी संस्कृति, नीति-नियम व आदर्श का अजश्र धाराप्रवाह है जो सबको अमृत समान जल से सींचकर पुष्पित और पल्लवित करती है।

''रामचरितमानस' एवं 'सप्तकाण्ड रामायण' में निहित रामभक्ति की तुलना' विषय को मैंने यहाँ लिया है। उपरोक्त विषय को मैंने दो उपशीर्षकों में विभाजित किया है। आगे हम इन्हीं उपशीर्षकों के माध्यम से दोनों ग्रन्थों में निहित रामभक्ति की समानता और असमानता के आधार पर चर्चा करने का प्रयास करेंगे। यथा,-

7.2 साम्य

'रामचरितमानस' एवं 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों ही महाकाव्यों में रामभक्ति की महिमा का बड़ा ही सुंदर उदाहरण प्रस्तुत हुआ है। दोनों ही ग्रन्थों के सभी पात्रों में रामभक्ति का महानतम आदर्श स्थापित हुआ है। 'श्रीमद्भागवतम्' के सातवें स्कन्ध में कहा गया है कि अज्ञान से मुक्त लाखों पुरुषों तथा लाखों सिद्ध महात्माओं में से शायद ही कोई एक नारायण का शुद्ध भक्त होता है-

मुक्तानामपि सिद्धानां नरायण-परायण: ।

सुदुर्लभ: प्रशांतात्मा कोटिष्वपि महा-मुने ॥(प्रभूपाद, सप्तम स्कंध 2018:328)

इस प्रकार से अगर देखा जाए तो क्या सुर, मुनि, मनुष्य, वानर सभी के हृदय में यहाँ रामभक्ति व्याप्त है। दोनों ही महाकाव्यों के पात्रों ने अपने जीवन को रामभक्ति के सागर में डुबो लिया है।

'रामचरितमानस' एवं 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों ही रामभक्ति मूलक दो प्रधान तथा महान ग्रंथ है। तुलसीदास भी अयोध्याकाण्ड में कहते हैं कि जिस प्रकार से रोगी शरीर सभी प्रकार के भोग्य पदार्थों को व्यर्थ समझता है तथा जिस प्रकार से भक्ति के बिना जप तथा योग भी व्यर्थ होते हैं और आत्मा के बिना यह शरीर भी व्यर्थ होता है। ठीक उसी प्रकार से श्री रघुनाथजी के बिना मनुष्य जीवन व्यर्थ है,-

सरूज सरीर बादि बहु भोगा। बिनु हरिभगति जायं जप जोगा ।।

जायं जीव बिनु देह सुहाई। बादि मोर सबु बिनु रघुराई ।।(तुलसीदास 2015:491)

'सप्तकाण्ड रामायण' में भी इसी प्रकार से माधव कंदली एक स्थान पर लंकाकांड में राम नाम का गुणगान करते हुए राम के श्री चरणों को प्रणाम कर कहते हैं कि राम के चरणों को छोडकर, राम की भक्ति छोड़कर अन्य कोई गति नहीं है-

नमो नमो राम राक्षसर अंतकारी ।

देवर देवता आदि पूरुष मूरारी ।।

गति मोर नाहि बिने तोमार चरणे ।

बोला राम राम यत सभासदगणे ।।(दत्तबरुवा 2016:13)

इस प्रकार से दोनों ही काव्यों में कवि द्वय रामभक्ति में ही अपनी गति को अनुभव कर उन राम के चरणों में ही अपना सर्वस्व न्योछावर कर देते हैं।

'श्रीचैतन्य-चरितामृत' अन्त्य लीला में भी कहा गया है कि इस कलियुग में नाम कीर्तन ही मूल धार्मिक प्रणाली है-

कलि-कालेर धर्म-कृष्ण-नाम-संकीर्तन ।

कृष-शक्ति विना नहे तार प्रवर्तन ॥(गोस्वामी और प्रभुपाद, द्वितीय प्रकाश 2013:700)

7.2.1 राम-भक्ति की आधारशिला 'नवधा-भक्ति' में समानता

दोनों ही ग्रंथ भक्ति और उसकी सम्पूर्ण विधियों में उत्तम तथा महान ग्रंथ हैं। दोनों ही ग्रन्थों में नवधा भक्ति की सम्पूर्ण विधियों का पालन हमें देखने को मिलता है। एक भक्त अपने आचार–विचार, रहन-सहन तथा नियम व कर्मो में बस अपने आराध्य की सेवा-भक्ति में अपनी समस्त इंद्रियों को संलग्न करने की ही इच्छा रखता है। उसका अपना कोई विशेष प्रयोजन होते हुए भी वह अपने आराध्य के संपर्क या उनकी भक्ति में आने के पश्चात सब कुछ भूलकर पूर्ण समर्पण करते हुए अपने आराध्य की प्रेमाभक्ति में लग जाता है। भक्ति का अर्थ ही है 'विशेष प्रेम' जो कि सेवा भाव में प्रकट होकर अपने आराध्य के श्रवण, कीर्तन आदि नौ विधियों को समेटे हुए उन्हीं के चिंतन में मग्न रहना चाहता है। इन विधियों के अनुसरण मात्र से ही कोई भी भक्त अपने आराध्य की अनुभूति तथा उनकी भक्ति का लाभ प्राप्त कर लेता है।

'श्रीचैतन्य-चरितामृत' के मध्य लीला में कहा गया है कि श्रवण, कीर्तन स्मरण आदि क्रियाएँ भक्ति के लक्षण हैं। इसका यही लक्षण है कि इससे परमेश्वर भगवान के प्रति प्रेम उत्पन्न होता है,-

श्रवणादि-क्रिया – तार 'स्वरूप'-लक्षण।

'तटस्थ'-लक्षणे उपजाय प्रेम-धन ॥(गोस्वामी और प्रभुपाद, द्वितीय प्रकाश 2013:160)

'श्रीमद्भागवतम्' के द्वितीय स्कन्ध में महाराज परीक्षित द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में श्रील शुकदेव गोस्वामी द्वारा दिए गए उत्तर स्वरूप में श्रील शुकदेव गोस्वामी कहते हैं कि जो सभी कष्टों से मुक्त होना चाहता है उसे श्री भगवान का श्रवण, कीर्तन तथा स्मरण करना चाहिए-

तस्माद्भारत सर्वात्मा भगवानीश्वरो हरि:।

श्रोतव्य: कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चेच्छताभयम् ॥(प्रभूपाद, द्वितीय स्कंध 2018:08)

'रामचरितमानस' एवं 'सप्तकाण्ड रामायण' भी अपनी सम्पूर्ण भक्ति भावना को प्रेम, सेवा व समर्पण की उच्चतर आध्यात्मिक गुणराशि में समेटे हुए अपने आराध्य के चरणों में ही अपने सम्पूर्ण जीवन को न्योछावर कर देता है। सेवा की इन नौ विधियों की बड़ी ही महिमा सभी शास्त्रों, उपनिषदों तथा महापुरुषों की वाणियों में बतायी गयी है जिनकी विस्तृत व्याख्या मैंने पूर्व में ही तृतीय अध्याय में कर दिया है। दोनों ही काव्यों में इन नौ विधियों का समावेश या यों कहें कि दोनों ही काव्यों में नवधा भक्ति की सम्पूर्ण विधियाँ समाविष्ट हैं। नवों विधियाँ वैसे तो प्रायः प्रत्येक पात्र की भक्ति भावना में ही सन्निहित हैं।

'रामचरितमानस' में श्रवण को भक्ति का एक महत्वपूर्ण तथा पहला चरण माना गया है। शिव से राम कथा का श्रवण कर पार्वती के हृदय में भी भक्ति की उत्पत्ति हो जाती है। रामकथा सुनकर वे स्वयं शंकरजी को कहती हैं कि ये कथा उनके हृदय को अत्यंत ही प्रिय लगी तथा उनके हृदय का जितना भी संदेह तथा उसपर जो अज्ञानता का पर्दा पड़ा हुआ था वह सब दूर हो गया तथा राम के चरणों में अब प्रेम उत्पन्न हो गया है। अब उनके मन का क्लेष भी समाप्त हो गया,-

सुनी सब कथा हृदय अति भाई। गिरिजा बोली गिरा सुहाई ।।

नाथ कृपा मम गत संदेहा। राम चरन उपजेउ नव नेहा ।।

मैं कृतकृत्य भइऊँ अब तव प्रसाद बिस्वेस।

उपजी राम भगती दृढ़ बीते सकल कलेस ।।(तुलसीदास 2015:1044)

सुन्दरकाण्ड में एक स्थान पर माधव कन्दली रामकथा के श्रवण करने की महिमा को व्यक्त करते हैं। कविराज माधव कन्दली यहाँ श्रवण भक्ति की महिमा को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं,-

शुनियोक सभासद मधूर कोमल पद

पुण्यकथा रामर चरित्र।

यमपथ निवारण कलिमल संहारण

महारस श्रवणे चरित्र।।

भाव भय बिनाशन महा मोक्ष प्रकरण

समस्त धर्म्मरे ईसे सार।

जानी शुना यत्न करि डाकी बोला हरि हरि

तेवे सूखे तरिबा संसार।।(दत्तबरुवा 2016:330)

श्रवण के पश्चात कीर्तन का महत्व होता है। कीर्तन ही कलियुग में मोक्ष रूपि अमृत की बूटी है। नाम कीर्तन रस का पान कर के एक साधारण, पापी से पापी मनुष्य भी अपने जीवन को परम गति दे सकता है। 'श्रीमद्भागवतम्' के षष्ठ स्कन्ध में कहा गया है कि भगवान के नाम के कीर्तन से प्रारम्भ भक्ति ही जीव मात्र का परम धर्म है,-

एतावानेन लोकेस्मिन् पुंसां धर्म: पर: स्मृत:।

भक्ति योगो भगवति तन्नामग्रहणादिभि: ॥(प्रभूपाद, षष्ठ स्कंध 2018:141)

कीर्तन-भक्ति की महिमा को व्यक्त करते हुए 'रामचरितमानस' के रचयिता तुलसीदास लिखते हैं कि भगवान के नाम का कीर्तन तो सरस्वती, शेष, शिव, ब्रहमा, शास्त्र तथा वेद और पुराण भी करते हुए यही कहते हैं कि इस नाम की महिमा का पार वे नहीं पा सकते। चारों युगों और तीनों कालों में नाम जप कर के ही जीवों का उद्धार संभव हुआ है।

माधव कंदली भी अपने श्रेष्ठतम महाकाव्य 'सप्तकाण्ड रामायण' में श्रवण भक्ति की महिमा की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि नाम स्मरण मात्र से ही करोड़ों पुरुषों का उद्धार संभव हो जाता है। कविराज निरंतर हरि नाम जपने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं-

रामायण कथाक शुनय यिटो जने।

पाप मृग पलाई येन सिंह दरशने।।

बिजूली चटक येन अथिर संसार।

राम सूमरणे कोटि पुरुष उद्धार।।

शुना सभासद राम चरित्र उत्तम।

समस्त लोकर ईसे धर्म्म मुख्यतम॥

ईहार स्मरणे सूखे तरिबा संसार।

जानि रामचन्द्रर कथाक करा सार।।(दत्तबरुवा 2016:231)

भक्ति की नवों विधियों में स्मरण भक्ति का भी विशेष महत्व है । गीता के आठवें अध्याय में भगवान कहते हैं कि जो भी व्यक्ति उन भगवान का स्मरण करने में मन लगाएगा और अविचलित भक्ति करते हुए ध्यान करेगा वह उन भगवान को अवश्य ही प्राप्त होगा-

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना ।

परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिंतयन् ॥(प्रभूपाद 2011:277)

'रामचरितमानस' और 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों में एक ही भाँति स्मरण-भक्ति की व्यापक गुणराशी का गायन भी हुआ है । 'रामचरितमानस' में अयोध्याकाण्ड प्रसंग में एक स्थान पर राजा दशरथ जब राम का वियोग सहन न कर पाने के कारण उनका स्मरण करते हुए बार-बार मूर्छित हो जाते हैं, उस प्रसंग मे स्मरण भक्ति की व्याख्या हुई है,-

गइ मुरुछा रामहि सुमिरि नृप फिरि करवट लीन्ह ।(तुलसीदास 2015:380)

'सप्तकाण्ड रामायण' में भी स्मरण-भक्ति की महिमा का अनेकों स्थान पर गुणगान किया गया है । सभी कार्यो, धर्मों आदि का त्याग करके केवल ईश्वर का स्मरण करने को कहते हुए यहाँ भी कवि लिखते हैं-

तेजि आन काम सूमरियो नाम

धर्म्मर ईश्वर जानि ।

करि थिर मन हरित शरण

लैयोक ईश्वर मानि ।।

नमो नमो राम करोहे प्रणाम

दिया चरणत चित्त ।(दत्तबरुवा 2016:101)

'रामचरितमानस' तथा 'सप्तकाण्ड रामायण' में राम-भक्ति तथा उनके पद-रज की सेवा भक्ति भावना ही प्रत्येक के हृदय में व्याप्त है । 'रामचरितमानस' और 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों में पाद-सेवनम भक्ति का वर्णन हुआ है । दोनों ही महाकाव्य के पात्र भक्तवत्सल राम की पद-रज की सेवा के बदले अपना सम्पूर्ण राज्य सुख तथा अपने प्राण तक न्योछावर कर देने को तत्पर हैं । सीता, दशरथ, लक्ष्मण, भरत, कौशल्या, निषाद, विभीषण, सुग्रीव, केवट, हनुमान, अंगद आदि समस्त भक्त तथा सम्पूर्ण प्रजा केवल राम के पद-रज की सेवा को लालायित अपने जीवन को न्योछावर कर देते हैं । एक प्रसंग द्रष्टव्य है जहां तुलसीदास ने केवट की राम के चरणों की सेवा भावना का सुंदर दिग्गदर्शन कराया है-

जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू । मोहि पद पदुम पखारन कहहू ॥(तुलसीदास 2015:426)

'सप्तकाण्ड रामायण' में भी राम के चरणों की सेवा के प्रति भरत की पाद-सेवन भक्ति विधि का सुंदर उदाहरण हमें देखने को मिलता है । राम भरत को अपनी कुश से बनी खड़ाऊँ दे देते हैं । राम के चरणों की सेवा के प्रति भरत की पाद सेवन भक्ति विधि का सुंदर उदाहरण देखने को मिलता है-

तोमार दूईखानि पानै प्रभू दियो मोक ।

माथात धरिया ताक पाशरिबो शोक ॥

सेहि पानैयूरि सिंहासनत थापिबो ।

ताके राजा पाति सबे राज्यभार दिबो ।।

तोमार चरण सेवा ताहाते करिबो ।

बनबास ब्रत यत गृहते धरिबो ।।(दत्तबरुवा 2016:175)

'रामचरितमानस' और 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों ही महाकाव्यों में भगवान की अर्चन भक्ति की व्याख्या भी सर्वथा देखने को मिल जाती है । 'रामचरितमानस' में भगवान की विधि पूर्वक अर्चना भरत, विभीषण आदि भक्तों ने की है । विभीषण ने तो राक्षश राज रावण की लंका नगरी में भी अपने आराध्य भगवान के अर्चन-पूजन के लिए मंदिर बनवा रखा है-

रामयुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ ।

नव तुलसि का बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ ॥(तुलसीदास 2015:719)

'सप्तकाण्ड रामायण' में भी इसी प्रकार से राम की अर्चना कई ऋषि मुनियों, भरत आदि ने की थी । यहाँ वर्णित अर्चन भक्ति भी समस्त मानव जाति के लिए प्रेरणा से परिपूर्ण है । 'सप्तकाण्ड रामायण' में अत्री ऋषि एक स्थान पर राम की अर्चना करते हुये बड़े प्रसन्न हैं । अरण्य कांड में राम जब अत्रीमुनि के आश्रम पहुँचते हैं तभी अपना अहोभाग्य समझकर अत्रीमुनि बहुत सुखी अनुभव कर कहते हैं कि बड़े भाग्य से आज स्वयं परमेश्वर राम उनकी कुटिया में पधारे हैं । अतः अत्रीमुनि राम को परमेश्वर जान उनके चरण-कमलों के दर्शन कर फल,जल आदि द्वारा राम की पूजा अर्चना की थी-

बिधिवते फूले जले पूजिया रामक ।

परम सादरे पूछिलन्त कूशलक ।।(दत्तबरुवा 2016:180)

'रामचरितमानस' एवं 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों ही महाकाव्यों में भगवान की वंदना भी अनेकों स्थानों पर देखने को मिल जाता है । यह व्याख्या वंदन भक्ति विधि की व्याख्या ही कहलाएगी । दोनों ही महाकाव्यों में वंदन भक्ति की वर्णना बहुत सुंदर ढंग से प्रस्तुत हुई है । दोनों ही काव्यों में राम की वंदना सभी महान आत्माओं द्वारा हुआ है । 'रामचरितमानस' में एक स्थान पर शिव स्वयं अपने आराध्य प्रभु श्रीराम की वंदना करते हुए कहते हैं कि राम के नाम जप के प्रभाव से ही वे सबका भला करते हैं । तुलसीदास भी बालकांड के प्रारम्भ में राम की वंदना करते हुए लिखते हैं कि-

बंदऊँ नाम राम रघुबर को । हेतु कृसानु भानु हिमकर को ॥

बिधि हरि हरमय बेद प्राण सो । अगुन अनूपम गुन निधान सो ॥(तुलसीदास 2015:41)

'सप्तकाण्ड रामायण' महाकाव्य में भी भगवान की वंदन भक्ति की व्याख्या अनेकों स्थानों पर हुई है । वंदन अर्थात अपने पालनहार की स्तुति यहाँ भक्त का संबल होता है । यहाँ भी देवतागन तथा ब्रह्मा प्रभु की स्तुति करते हैं तथा भगवान को प्रसन्न कराकर उनके राम अवतार की बात याद दिलाते हैं कि रावण का आतंक बढ़ गया है । अब राम अवतार लेकर उस पापी से त्रिलोक की रक्षा करें । देवता वंदना करते हुए कहते हैं कि सर्वजन अधिपति नारायण की जय हो । दयाशील तथा अगति के गति, ब्रम्हमय देहधारी दामोदर को नमस्कार करते हैं । देवता याचना करते हैं कि वे प्रभु की स्तुति करना नहीं जानते-

नजानोहो स्तुति नति प्रणति तोमार ।

जय जय हरि हेरा गोचर आमार ।।

एहिमते देवे स्तुति करिले बिस्तर ।

शुनिया संतुष्ट भैला त्रैलोक्य ईश्वर ।।(दत्तबरुवा 2016:41)

वंदन के पश्चात दास्य भक्ति का स्थान है । महाकवि तुलसीदास अपने आप को राम का कींकर, उनका दास मानते हैं । वे राम के परम दास हैं । उनकी भक्ति दास्य भावना प्रधान है । राम चरणों की सेवा में ही उनका परम सुख है । तुलसी के भरत तो एक स्थान पर कहते हैं कि वे तो राम के ही दास हैं । माता की कुटिलता ने ही राम को उनसे दूर कर दिया-

हित हमार सियपति सेवकाईं । सो हरि लीन्ह मातु कुटिलाईं ॥

मैं अनुमानि दीख मन माहीं । आन उपायं मोर हित नाहीं ॥(तुलसीदास 2015:491)

'सप्तकाण्ड रामायण' के पात्र- लक्ष्मण, गुह, सीता, भरत, आदि सभी भक्त तथा वानर गण भी अपने को भगवान राम का तुच्छ दास ही मानते हैं । भरत पिता की मृत्यु के पश्चात उनका दाह-संस्कार कर के स्वयं को अपने प्रभु श्रीराम के चरणों के दास के रूप में समर्पित कर देते हैं-

करिबो रामक सेवा नलागय राज ।।(दत्तबरुवा 2016:157)

राम कृपा के सागर हैं जो अपने भक्त को अपना दास नहीं बल्कि अपना मित्र मानते हैं । अपने आराध्य को अपने मित्र रूप में पाकर भी सुग्रीव, विभिषन, गुह आदि भक्त अपनी सेवा भावना में और अधिक अग्रसर ही हो जाते हैं । 'रामचरितमानस' और 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों ही महाकाव्यों में सख्य भाव भक्ति की अभिव्यक्ति हुई है । तुलसी के राम सुग्रीव को अपना मित्र बना लेते हैं । सुग्रीव की मित्रता तथा भक्ति के वश भगवान ने पहले अपने कार्य को न कर मित्र का कार्य करने में अपना धर्म समझकर सुग्रीव का दुःख दूर करके

कहने लगे कि वे एक ही बाण से बाली का वध कर देंगें । शिव, ब्रह्मा आदि की शरण में जाने पर भी उसकी रक्षा नहीं हो पावेगी । मित्र के दुख को देखकर जो दुखी नहीं होता उसे देखने पर भी पाप लगता है,-

सुनु सुग्रीव मारिहऊँ बालिहि एकहिं बान ।
ब्रह्म रुद्र सरनागत गएँ न उबरिहिं प्रान ॥
जे न मित्र दुख होहिं दुखारी । तिन्हहि बिलोकत पातक भारी ॥
निज दुख गिरि सम रज करि जाना । मित्रक दुख रज मेरु समाना ॥(तुलसीदास 2015:687)

सख्य भक्ति पद्धति की इसी प्रकार से व्याख्या माधव कंदली के रामायण में भी प्रसुत है । यहाँ भी राम भक्त द्रोही के वध को दोषरहित मानते हुए कहते हैं,-

नाहि दोष भकतद्रोहीक करो हत ।।(दत्तबरुवा 2016:245)

भक्ति की विधियों में अन्तिम विधि है आत्म निवेदन विधि । इसमें एक भक्त अपना सर्बस्व अपने आराध्य के श्रीचरणों में अर्पित कर उनके चरणों में ही आश्रय ले लेता है । 'रामचरितमानस' एवं 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों ही महाकाव्यों में आत्म निवेदन भाव की भक्ति भक्तों के हृदय में देखी जा सकती है । लक्ष्मण ने जब देखा कि उनके आराध्य राम वन को जा रहे हैं । तब वे अपने प्राणप्रिय स्वामी के चरणों में आत्मनिवेदन करते हुए अपने साथ ले चलने की याचना करते हैं । लक्ष्मण के हृदय की पीड़ा तथा उनका आत्म निवेदन स्वर तुलसीदास ने कुछ इस प्रकार से वर्णित किया है,-

मन क्रम बचन चरन रत होई । कृपासिन्धु परिहरिअ कि सोई ॥(तुलसीदास 2015:687)

'सप्तकाण्ड रामायण' में भी लक्ष्मण राम के अकेले वन-गमन पर द्रवित होकर अपने प्राण तक त्याग कर देने की बात करते हुए कहते हैं,-

तूमि एरि गैले मई याईबो देशान्तर ।

नूहि आजि कटारत करिबोहो भर ।।(दत्तबरुवा 2016:120)

इस प्रकार से यहाँ पर भक्ति की नवों-विधियों की व्याख्या दोनों ही श्रेष्ठ काव्य 'रामचरितमानस' तथा 'सप्तकाण्ड रामायण' में पूर्ण भक्ति भाव से किया गया है । दोनों ही महाकाव्य भक्ति की अजस्र धारा को प्रवाहित करती हैं जो भक्तों के हृदय को सुख तो देती ही है, अभक्त जनों के हृदय में भी राम भक्ति की प्रेरणा जगाने का सार्थक प्रयास भी करती है ।

7.3 वैषम्य

'रामचरितमानस' महाकाव्य के सभी पात्रों के हृदय में निहित भक्ति परम निर्मल तथा प्रभावशाली है । यहाँ सभी पात्र अपने हृदय में राम-भक्ति को सँजोए हुए हैं । पात्रों के हृदय में ही नहीं उनके समस्त आचरण तथा क्रिया कलाप राम मय हैं । विभीषण रावण के राज्य में राक्षस वंशजों से घिरे हुए रहते हैं । परंतु फिर भी उनका गृह उस राक्षस नगरी में होने के बावजूद विष्णु-मंदिर-सा सजा हुआ अत्यंत अलौकिक दिखता है । यही कारण है कि हनुमान उस मंदिर को देखकर ही आश्चर्य चकित हो जाते हैं । वे विभीषण से मिलन हेतु आतुर हो उठते हैं । परंतु 'सप्तकाण्ड रामायण' में हनुमान प्रहस्त, अश्वकर्ण लोमकर्ण, विभीषण आदि सभी के भवन देखते हैं, लेकिन यहाँ विभीषण के महल का वह चित्रण नहीं हुआ है जैसा 'रामचरितमानस' में देखने को मिलता है ।

लेखक आर. एन. वैद्य अपनी कृति 'भारतीय भाषाओं में रामकथा' के एक अध्याय में इन दो महानतम महाकाव्यों की तुलना करते हुए लिखते हैं-

> तुलसीदास जी ने विभीषण के गृह को एक रामभक्त के गृह के रूप में चित्रित किया है। ऐसा इस रामायण में नहीं है।(वैद्य 1999:173)

इसके अतिरिक्त 'रामचरितमानस' और 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों ही महाकाव्य रामभक्ति से ओत-प्रोत काव्य हैं। हमारे प्राचीन भक्ति संप्रदायों में जीव हत्या अथवा मांस आदि अभक्ष्य के सेवन का निषेध किया गया है। कोई भी विष्णु भक्ति संप्रदाय इस बात का समर्थन नहीं करता। गीता में भगवान कृष्ण स्वयं कहते हैं कि वे ही समस्त योनियों को बीज प्रदान करने वाले पिता हैं। अतएंव उनकी ही संतान की हत्या कर के खाना उनकी भक्ति कैसे हो सकती है,-

> सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः संभवन्ति याः।
>
> तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता॥(प्रभूपाद 2011:449)

यहाँ तक कि वाल्मीकि कृत 'रामायण' में भी मांस सेवन का वर्णन नहीं मिलता। वहाँ भी जब राम सीता तथा लक्ष्मण सहित वन में विचरते हैं तब मित्र निषादराज गुह द्वारा स्वादिष्ट भोजन देने पर भी राम ने अपने फल-मूल पर जीवन निर्भर कर जीने की बात निशादराज को बताई और अन्न ग्रहण नहीं किया। इसके अतिरिक्त वन में विचरते हुए वे जब भरद्वाज मुनि के आश्रम पहुंचे तब भी मुनि को स्वयं के विषय में बताते हुए राम कहते हैं कि वे अब वन में विचरते हुए फल-मूल का ही आहार ग्रहण करेंगे-

> पित्रा नियुक्ता भगवन् प्रवेक्ष्यामस्तपोवनम्।

धर्ममेवाचरिष्यामस्तत्र मूलफलाशनाः ॥(वाल्मिकी, चौदहवाँ 2076 सं:388)

'रामचरितमानस' में भी अनेक प्रसंगों में राम, सीता, लक्ष्मण द्वारा फल-मूल खाकर जीवन निर्वाह करते हुए ही दिखाया गया है। यहाँ किसी प्रकार के मांस आदि अभक्ष्य के खाने की व्याख्या नहीं हुई है। यथा-

सिय सुमंत्र भ्राता सहित कंद मूल फल खाइ।(तुलसीदास 2015:417)

परंतु 'सप्तकाण्ड रामायण' के अयोध्याकांड में हिरण आदि जीवों का शिकार कर उसके मांस को पकाकर खाने की बातों का यहाँ उल्लेख हुआ है। राम जब लक्ष्मण और सीता सहित भरद्वाज मुनि के आश्रम की ओर प्रस्थान करते हैं तभी वहीं मार्ग में उनके द्वारा हिरण मारकर पकाकर खाते हुए यहाँ दिखाया गया है। यथा,-

हरिणके मारिया रान्धिया तैते खाईला।

बृक्षमूले लखाई पत्र शय्याक बिछाईला ॥(दत्तबरुवा 2016:140)

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि दोनों ही महाकाव्यों में रामभक्ति की अभिव्यंजना निस्संदेह अनुसरणीय और हृदयग्राही है। तथापि 'रामचरितमानस' की भक्ति वैष्णव संप्रदायों के मत तथा सिद्धांतों को लेकर आगे बढ़ती है। वहीं 'सप्तकाण्ड रामायण' की रामभक्ति उन मतवादों तथा सिद्धांतो का सम्पूर्ण रूप से अनुसरण नहीं करती। यहाँ की रामभक्ति समकालीन समाज की खान-पान की प्रवृत्ति, उसकी मांस आदि सेवन की प्रथा को यथावत आत्मसात किए हुए आगे बढ़ती है। यहाँ भक्ति तो सभी प्राचीन मान्यताओं के अनुरूप ही है परंतु कुछ ऐसे सिद्धांतों का यहाँ पालन देखने को नहीं मिलता जो वैष्णव-भक्ति-संप्रदाय का अभिन्न अंग हैं। हाँ लेकिन यह कहना उचित है कि दोनों ही काव्यों का अन्तिम लक्ष्य रामभक्ति ही है।

इनके अतिरिक्त और भी कई सारी बातों तथा प्रसंगों में हमें वैषम्य देखने को मिलता है । 'रामायणी साहित्यर अध्ययन' नामक रामकाव्य विषयक समीक्षात्मक आलोचना में शोभन चन्द्र शइकिया लिखते हैं-

> माधव कंदलीर रामायणत भक्तिर न्यूनता आरू रामर चरितत ऐश्वरिकतार अभाव देखि रामक पूर्ण ईश्वररुपे चित्रित करी अनंत कंदलिये आन एखन रामायण रचना करिवलइ लोवा कार्यर परिणतितेई शंकरदेवे उत्तरकाण्ड रचना करिब लगा हल ।(बरा शइकीया और बरा 2005:76)

'रामचरितमानस' में राम मर्यादापुरुषोत्तम भगवान हैं । वे समस्त जगत के स्वामी हैं । बालकांड में ही तुलसीदास सीता स्वयंवर प्रसंग में लिखते हैं कि सम्पूर्ण जगत् के स्वामी राम धनुष उठाने के लिए चलें-

> सहजहिं चले सकल जग स्वामी ।तुलसीदास 2015:247)

इसी प्रकार से 'सप्तकाण्ड रामायण' में भी माधव कंदली प्रत्येक कांड के प्रारम्भ और विभिन्न स्थानों पर राम को परमेश्वर भगवान कहकर संबोधित करते हुए कहते हैं-

> जय नमो रामचन्द्र प्रभू भगवंत ।
>
> याहार लीलार केहो नपावन्त अन्त ॥
>
> इच्छामाजे होवें सृष्टि पालन संहार ।
>
> हेन रामपदे करो कोटि नमस्कार ॥
>
> याक स्मरि तरे महा महापापिचय ।

भजोहो सादरे हेन राम कृपामय ॥(दत्तबरुवा 2016:179)

दोनों ही महाकाव्यों में भक्ति वैषम्य पर विचार किया जाय तो यही कहा जा सकता है कि तुलसी के राम परमेश्वर तो हैं ही परंतु इस महाकाव्य के समस्त चरित्र यह मानते भी हैं। अर्थात सभी पात्र राम को पूर्ण ईश्वर ही मानते हैं। वहीं माधव कंदली विरचित रामायण के पात्र राम को एक राजा, एक आदर्शवादी मर्यादा के अन्यतम महापुरुष तथा अवतार भी मानते हैं। उदाहरण स्वरूप 'सप्तकाण्ड रामायण' में ताड़का वध के समय मुनि विश्वामित्र राम को यह समझाते हुए कहते हैं कि राक्षसी का वध करने पर कोई दोष नहीं होता-

मुनि बुलिलंत राम नकरिबा भय।

राक्षसी मारिले किछू दोष नोपजय ॥(दत्तबरुवा 2016:61)

परंतु 'रामचरितमानस' में मुनि द्वारा ताड़का का वर्णन सुनते ही राम ने बाण चलाकर उस राक्षसी ताड़का के प्राण हर लिये तथा उसे अपनी कृपा भी दी-

चले जात मुनि दीन्हि देखाई। सुनि ताड़का क्रोध करि धाई ॥

एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा। दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा ॥(तुलसीदास 2015:207)

अतः यहाँ 'रामचरितमानस' में राम मर्यादापुरुषोत्तम राजा होते हुए भी सकल जग तारण अवतारी भगवान हैं।

प्रसंगों के वर्णन में कुछ ऐसे प्रसंग हैं जो दोनों काव्यों में समान नहीं है। 'रामचरितमानस' में पुष्प वाटिका प्रसंग, केवट प्रसंग इत्यादि भक्ति और सोंदर्य का प्रसंग है। परंतु सप्तकांड रामायण में यह प्रसंग नहीं

मिलता । वहीं 'सप्तकाण्ड रामायण' में धनुर्भंग उत्सव में समस्त राजाओं से राम-लक्ष्मण के साथ युद्ध का वर्णन इत्यादि प्रसंग का बड़े ही विस्तार से वर्णन किया गया है । परंतु 'रामचरितमानस' में केवल धनुष भंग और विवाह का ही प्रसंग अंकित है ।

7.4 निष्कर्ष

इस प्रकार से समस्त बातों पर विचार करते हुए यही निष्कर्ष निकलता है कि 'रामचरितमानस' एवं 'सप्तकाण्ड रामायण' दोनों ही महाकाव्य भक्ति भाव से पूर्ण प्रेरणा दायक रचनाएं हैं जो समाज को भक्ति की भावना का बिनमोल ही दान करती हैं । वहीं असमानता की बात करें तो कुछ भक्ति मूलक प्रसंगों का वर्णन दोनों महाकाव्यों में नहीं मिलता तथा 'रामचरितमानस' के पात्र अपने आदर्श भाव तथा भक्ति को अलौकिक रूप से समेटे हुए हैं । 'सप्तकाण्ड रामायण' में यही भक्ति भावना मानव के लिए कल्याणकारी बनकर समाज के साधारण मानव जाति का प्रतिनिधित्व कर उनको उनके समर्पण भावना और गुण अनुसार भक्ति प्रदान करती हैं। दोनों ही काव्य अत्यंत ही श्रेष्ठ काव्य है तथा दोनों की भक्ति-भावना सर्वर्था अनुसरणीय है ।